हिन्दी गद्य का आविर्भाव हिन्दी नवजागरण की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। इस परिप्रेक्ष्य में इसका सम्बन्ध 19वीं शताब्दी से जुड़ता है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं कि 19वीं शताब्दी के पूर्व हिन्दी में गद्य मौजूद ही नहीं था। हिन्दी में गद्य लेखन की परंपरा की शुरुआत दक्खिनी हिन्दी से मानी जाती है। सूफी संत गेसूदराज को हिन्दी का पहला गद्य लेखक माना जाता है और इनकी रचना 'मेराजुल आशिकीन' को हिन्दी की पहली गद्य रचना। आगे चलकर दक्खिनी हिन्दी में वजहि मसनवी शैली के 'सबरस' को लेकर उपस्थित होते हैं जो सूफी प्रेम कथा है। आगे चलकर उत्तर भारत में अकबर

के समय गंगकवि के द्वारा 'चंद छंद वरनन की महिमा' की रचना की जाती है। यह रचना उत्तर भारत में खड़ी बोली की पहली गद्य रचना है। आगे चलकर 18वीं शताब्दी में रामप्रसाद निरंजनी 'भाषा योग वशिष्ठ' को लेकर उपस्थित होते हैं, जिनमें स्पष्ट सुथरी खड़ी बोली का प्रयोग किया गया है। आचार्य शुक्ल ने अब तक पायी गई पुस्तकों में 'भाषा योग वशिष्ठ' को सबसे पुरानी रचना माना है, जिसमें गद्य अपने परिवर्तित रूप में दिखाई पड़ती है।

आगे चलकर 19वीं शताब्दी के आरंभिक दशकों में मुंशी सदासुख लाल 'मुंतखबुत्तवारीख', लल्लू लाल जी 'प्रेमसागर', सदल मिश्र 'नासिकेतोपाख्यान' और इंशाअल्लाह खान 'रानी केतकी की कहानी' लेकर उपस्थित होते हैं। इस दौर में इन चारों लेखकों ने गद्य लेखन की परिपाटी को आगे बढ़ाने

का काम किया। इस कार्य में जॉन गिलक्रिस्ट के नेतृत्व में फोर्ट विलियम कॉलेज की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही। लल्लू लाल जी, सदासुखलाल नियाज और सदल मिश्र आगे चलकर इसी से सम्बद्ध हो गए। इस परिपाटी को विकसित करने में इसाई मिशनरियों की भी अहम भूमिका रही जिन्होंने तुलनात्मक धार्मिक लेख और शिक्षा-विषयक पुस्तकों का गद्य में प्रकाशन करवाया। आगे चलकर भारतीय नवजागरण चिंतकों राजा राममोहन राय से लेकर दयानंद सरस्वती तक ने अपनी पुस्तकों और पत्रिकाओं के जरिए हिन्दी गद्य को लोकप्रिय बनाने में अहम भूमिका निभाई। राजा राम मोहन राय के 'वेदांतसूत्र' का 1813 में हिन्दी अनुवाद सामने आता है जबकि दयानंद सरस्वती 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिन्दी में करते हैं। 1821 में पंडित युगल किशोर के नेतृत्व में 'उदन्त-मार्तण्ड' के रूप में हिन्दी का पहला समाचार

स्पष्टत: भारतेंदु के पूर्व ही खड़ी बोली में गद्य लेखन की परंपरा निर्मित होने लगी थी। भारतेंदु और भारतेंदु मण्डल के रचनाकारों ने गद्य लेखन की उस परंपरा को व्यवस्थित और परिष्कृत रूप प्रदान किया, जिस पर गद्य लेखन की परंपरा आगे भी विकसित होती रही। हालांकि की ब्रजभाषा में गद्य का प्राचीनतम रूप 14वीं शताब्दी की है। '84 वैष्णवों की वार्ता' और '252 वैष्णवों की वार्ता' में गद्य का परिमार्जित रूप दृष्टिगत होता है। लेकिन 18वीं शताब्दी में खड़ीबोली में गद्य लेखन की सशक्त परंपरा के समक्ष ब्रजभाषा टिक नहीं पायी, और भारतेंदु युग में इसे गद्य के लिए अनुपयुक्त मान लिया गया। यहीं से ब्रजभाषा की तुलना में खड़ीबोली को बढ़त मिलती है और द्विवेदी युग तक आते-आते गद्य और पद्य दोनों के संदर्भ में ब्रजभाषा पर खड़ी बोली के वर्चस्व की स्थापना होती है।